P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* (Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

बहुसांस्कृतिक भारत के विषय में जय प्रकाश नारायण का चिन्तन

सुधाकर लाल श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
दी0द0उ0गो0वि0वि0,
गोरखपुर, उ.प्र., भारत

सारांश

भारत जैसा राष्ट्र जिसमें महाराष्ट्र समेत ऐसे प्रदे"ा हो जो अपने आप में एक राष्ट्र की शर्त पूरी करते हों, सांस्कृतिक साहिष्णुता एक उपयोगी ही नहीं बल्कि अनिवार्य द"ाि है इसमें वही नेता जनता के हृदय में स्थान बना सके हैं जिन्होंने अपने विचार और कर्म में बहुसांस्कृतिवाद को अभिन्न अंग की तरह साथ रखा हो, किसी एक वि"ोष धर्म, संस्कृति को ही भारतीय राष्ट्र और संस्कृति का पर्याय मानने वाले नेतागण क्षणिक चमक के साथ बुझ गये। स्थायी स्थान तो बहुसांस्कृतिवादी जीवन पद्धति अपनाने वालो ने ही बनाया। ऐसे ही नेताओं की श्रेणी में महत्वपूर्ण स्थान है लोकनायक के नाम से प्रसिद्ध भारत के स्वाधीनता सेनानी एवं सम्पूर्ण क्रान्ति के वाहक जय प्रका"ा नारायण का जो अपने जीवनकाल में ही किवदन्तों बन चुके थे।

मुख्य शब्द : बहुसांस्कृतिवाद, स्वाधीनता सेनानी जय प्रका"ा नारायण।

प्रस्तावना

जय प्रका"ा नारायण पराधीन भारत में जन्म लेने वाले नवयुवक थे, उस समय प्रत्येक प्रगति"ाील नवयुवक भारत की स्वाधीनता के संघर्ष में समाजवाद को साथ लेकर चलने लगा था जयप्रका"ा के अनुसार समाजवाद सामाजिक आर्थिक, पुर्ननिर्माण का एक सिद्धान्त है यह व्यक्तिगत नैतिकता के ऊपर की बात है। इसका उद्दे"य सम्पूर्ण समाज का एवं पूर्ण सन्तुलित विकास है।[1] उस समय भी समाजवाद का कौन सा स्वरूप भारत के लिए सटीक उत्तम रहेगा इस प्र"न का समाधान ढ़ढते हुए जय प्रका"ा नारायण ने स्वाधीनता संघर्ष में भाग लिया और कांग्रेस समाजवादी दल के वामपंथी बुर्जुवा नेताओं के साथ भारतीय समाजवाद का रास्ता ढूढते रहे।[2] मार्क्स, गांधी, विवेकानन्द, विनोवा आदि सबकी प्रासंगिकता मानते हुए जय प्रका"ा ने यही प्रयास किया कि इन सबसे जो कुछ भी लिया जा सकता है वह ग्रहण किया जाना चाहिए। इन विभूतियों में वैचारिक भिन्नता के बावजूद एक बड़ो समानता देखी जा सकती है वह यह कि इनका चिन्तन किसी संकीर्ण दायरे में संकुचित नही रहा है और सम्पूर्ण मानव समाज इनके चिन्तन का केन्द्र बिन्दु रहा जयप्रका"ा का इनके प्रति आकृष्ट होने का यह बहुत बड़ा कारण था। किसी चिन्तन और आन्दोलन का आम जनता पर क्या प्रका"ा पड सकता है और सत्ता चन्द लोगों से हटते हुए कैसे आम जनमानस तक पहुचे यह जयप्रका"ा की चिन्ता का केन्द्र बिन्दु रहा इस लिए जब वह समाजवादी नेता के रूप में उभरकर आये थे तब भी और जब वह सर्वोदयी नेता के रूप में स्थापित हुए उस समय भी उनका एक ही लक्ष्य था वह जनता के हाथ में सत्ता। यहां यह महत्वपूर्ण है कि इस जनता में का"मीर से कन्याकुमारी तथा गुजरात से नागालैण्ड का भारतीय समिलित था। सम्पूर्णक्रान्ति की अवधारणा में यह सारा चिन्तन धनीभूत होकर हमारे सामने आता है। यहा सम्पूर्णकान्ति के सन्दर्भ में उनकी जीवन दृष्टि कहां तक पहुंच गयी थी उसके लिए उनके विचारों की झलक देना आव"यक लगता है। चण्डीगढ़ में एक नजरबन्दी के समय जयप्रका"ा नारायण ने लिखा था।[3] किन्तु जयप्रका"ा जी सहिष्णुता का अर्थ यह कदापि नही था कि वे यथास्थिति को भी स्वीकार करते थे और संस्कृति के नाम पर कुरीतियों को भी अंगीकार करते थे। इसके ठीक विपरीत उन्होंने जातिवाद तथा कुरीतियों को भारत के लिए अभि"ाप माना। इस सम्बन्ध में उनके चिन्तन की झलक निम्नलिखित अभिव्यक्ति में देखी जा सकती है [4] –

जातीयता हमार लिए एक अभि"ाप है – ऊंच–नीच के ये भेद मिटाने होंगे मनुष्य के गुण कर्म के अनुसार उसकी इज्जत हो, इस प्रकार मनुष्य–मनुष्य का भेद हमे मिटाना होगा। जाति–पाति, छुआछूत सभी समाप्त करने होंगे, जनेऊ

यदि उच्च जाति का प्रतीक माना जाता हो तो जनेऊ भी तोड़ना होगा। जाति–प्रथा टूटे उसक लिए एक महत्वपूर्ण साधन अन्तर्जातीय विवाह हो सकता है बिहार आन्दोलन के दौरान में नये खूनवाले युवकों को ललकार कर कहता था कि अभी आप सम्पूर्ण क्रान्ति और इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगाते हो। लेकिन जब तुम्हारी शादी होगी, तुम्हारे बाप लड़की से तिलक–दहेज मांगगे और तब तुमने उनको रोका नहीं प्रतिवाद नही किया तो धिक्कार है। तुम्हारे इन्कलाब जिन्दाबाद के ऊपर तुम्हारा सारा त्याग बलिदान व्यर्थ गया।[5]

जय प्रका"ा नारायण यह मानते थे कि अन्याय और अत्याचार हिंसा को जन्म देते हैं। आज से 40वर्ष से भी ज्यादा पहले के समय उन्होंने नक्सलवादी हिंसा के सम्बन्ध में जो कहा था उसे देखकर आ"चर्य होता है और आज के सन्दर्भ में वे और भी ज्यादा महत्वपूर्ण लगते हैं। उनके निम्नलिखित विचार प्रासंगिक है।[6] स्पष्ट है कि जयप्रका"ा नारायण के चिंतन में 'संकीर्णता' का कभी प्रवे"ा नहीं रहा है। जयप्रका"ा के प्र"ांसकों की तो बात ही क्या उनके घोर विरोधी भी उन पर 'संकीर्णता' का आरोप नहीं लगाते। आपात–काल के विरोध में उन्होंने इंदिरा गांधी विरोधी समस्त विपक्षी पार्टियों को एकजुट कर लिया था और 1977 में पहली बार केन्द्र में गैर कांग्रेसी सरकार का गठन हुआ था।[7] इस संघर्ष की प्रक्रिया में कई बार नानाजी दे"ामुख, अटल बिहारी वाजपेयी आदि नेताओं ने भी उनसे निकटता बनायी थी राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के लोग भी उनका आ"ाीर्वाद हासिल करने आये थे। इन शक्तियों ने बाद में जयप्रका"ा नारायण से निकटता का दरूपयोग किया और यह दुष्प्रचार भी किया कि जयप्रका"ा नारायण भी राष्ट्रीय–स्वयं सेवक संघ के प्र"ांसक थे किन्तु यह दुरूपयोग जयप्रका"ा के सही मूल्यांकन पर पर्दा नहीं डाल सकता। अधिक से अधिक इसे जयप्रका"ा नारायण की असावधानी माना जा सकता है कि उन्हें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए थी कि कौन–कौन सी शक्तियां उनके साथ जुड़ रही है और वे आगे चलकर उनकी निकटता को किस रूप में प्रस्तुत करेंगी। किन्तु किसी व्यक्ति की 'असावधानी' उसका मूल चिन्तन और कर्म नहीं होता मूलतः तो जयप्रका"ा के चिन्तन में समग्र मानवता थी जिसके न तो साम्प्रदायिकता के लिए कोई स्थान था [8] और नही भाषाई या प्रान्तीय संकीर्णता के लिए कोई स्थान था।

यहाँ ध्यान देने लायक तथ्य यह है कि जब तक जयप्रका"ा जीवित रहे तब तक हिन्दुत्व वादी शक्तियों ने 'रामजन्मभूमि' विवाद का नाम तक लेना उचित नहीं समझा और न ही बाल ठाकरे ने कभी गैर–मराठियों को लेकर अपने तेवर तीखे किये। सम्पूर्ण क्रान्ति के प्रका"ा में ऐसे उलूक अपना ि"ाकार नहीं कर सकते थे। चिन्तनहीनता के अन्धकार में ही वे खूखाँर हो उठे है और चिन्तन का प्रका"ा होते ही वे पुनः सिमट जायेंगे।

वस्तुतः जयप्रका"ा नारायण की दष्टि जो हमें"ाा ही सचेत रही। जयप्रका"ा एकत्ववादी राज्य के पूर्णतया विरूद्ध थे उनके अनुसार सरकार की मात्र सम्पत्ति से नही बल्कि सहभागिता से कार्य करना चाहिए।[9] अंतिम समय में भी उन्होंने अनुमान लगा लिया था कि 'जनता पार्टी' भी वस्तुतः अवसरवादी तत्वों का जमघट ही है। इसीलिए 5 जून 1978 को उन्होंने सार्वजनिक रूप से वक्तव्य दिया कि जनता सरकार भी पिछली कांग्रेस सरकार के रास्ते पर चल रही है। लोग उम्मीद खो रहे है क्योंकि जनता पार्टी उनकी उपेक्षा पर खरी नहीं उतर रही है।[10]

निष्कर्ष

आज जब स्वार्थी तत्वों ने 'संकीर्णता' की राजनीति को ही साधन बना लिया है तो गांधी की तरह सत्ता के बड़े से बड़े पद को ठुकराने वाले जयप्रका"ा नारायण की बरबस याद आती है। उनके चिंतन भारत को कर्म रूप प्रदान करके ही समस्या का निदान किया जा सकता है। उन्होंने अपने सुनि"चित लक्ष्य के लिए अपने मानस लोक को पूर्वतः मक्त रखा, जहां से भी प्रका"ा दिखा जयप्रका"ा नारायण ने उसे स्वीकार किया और अपनी विचार यात्रा में भी परिवर्तन किया अतः वे सत्य के ऐसे आग्रही थे जो रूढ़ि अनुगामी नही होता। इतना निर्विवाद है कि बीसवी शताब्दी के नेताओं में महात्मागांधी के बाद जयप्रका"ा नारायण को ही एक साथ प्र"ांसा और आलोचना मिलती रही है, महात्मा गांधी की तरह जय प्रका"ा नारायण ने भी कोई पद नही संभाला इसलिए नैतिकता और त्याग के महातुला पर गांधी जैसे वे अतुलनीय रहे।

अंत टिप्पणी

1. *जयप्रका"ा नारायण : हवाई सो"ायोलिज्म ? बनारस दी आल इण्डिया कांग्रेस सो"ालिस्ट पार्टी 1936 पृ0–88*
2. *जय प्रका"ा नारायण : वही, पृ0सं0–1*
3. *जय प्रका"ा नारायण : मेरी विचार यात्रा–भाग दो, सर्व सेवासंघ प्रवासन वाराणसी पृ0–113*
4. *जय प्रका"ा नारायण : वही पृ0–114*
5. *जय प्रका"ा नारायण : वही पृ0–97–98*
6. *जय प्रका"ा नारायण : वही पृ0–98–99*
7. *क्रान्ति शाह : जय प्रका"ा की जीवन यात्रा सर्व सेवा संघ वाराणसी, पृ0सं0–257*
8. *साम्प्रदायिकता पर जयप्रका"ा नारायण की दृष्टि एवं कर्म के लिए देखे–'जयप्रका"ा नारायण' पर सुधा"ा रंजन की पुस्तकका अध्याय–'अंतिम संघर्ष की तैयारी, बंटवारे का विरोध' में ''साम्प्रदायिक एकता के लिए प्रयास। जय प्रका"ा की जीवन यात्रा, पृ0–258*
9. *जय प्रका"ा नारायण : स्वार्डस टोटल रिवोल्यू"ान, सर्च फार एन आइडियों लोपी भाग–1 पृ0–92*
10. *सुधा"ा रंजन : जय प्रका"ा नारायण नें"ालन बुक टेस्ट आफ इण्डिया पृ0–180*